Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 1, January-2019, ISSN 2230-7540

दलित वर्गों के उत्थान में महात्मा गांधी जी की भूमिका

Upendra Kumar*

M.A. in History, UGC NET

सार – महात्मा गांधी छुआछूत के सख्त ख़िलाफ थे. वो चाहते थे कि ऐसा समाज बने जिसमें सभी लोगों को बराबरी का दर्जा हासिल हो क्योंकि सभी को एक ही ईश्वर ने बनाया है. उनमें भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए.

महात्मा गांधी ने वास्तव में अछूत प्रथा एवं समूचे जाति-भेद को मिटाने के लिए भरसक प्रयास किये. लेकिन चंद दलित नेता उन्हें 'दलित विरोधी' मानते थे. उनकी मृत्यु के छह दशक बाद भी कांशीराम-मायावती जैसे राजनीतिक नेता हों या बामसेफ संगठन के छोटे-मोटे पदाधिकारी हों या डॉ. कांचा इलैया जैसे विश्वविद्यालयों में पढ़ाने वाले अध्यापक बुद्धिजीवी हों, सभी गांधीजी को दलितों का दुश्मन मानते हैं. इससे गांधीजी का कोई नुकसान अब होने वाला नहीं है. लेकिन उनसे प्रेरणा पाकर राष्ट्र-निर्माण के काम में जुटे हजारों कार्यकर्ताओं को यह बात अखरती है.

---------------------------------x---------------------------------

प्रस्तावना

जाति-प्रथा निर्मूलन के कार्य को प्रभावशाली बनाने के लिए दलित जाति में जन्मे विचारक एवं कार्यकर्ताओं की भूमिका जितनी महत्त्वपूर्ण है, उतना ही अन्य जाति में पैदा हुए स्त्रात-पुरुषों का सवर्ण समाज व अवधारणा एवं आदतें बदलने के काम में शरीक होना जरूरी है. गांधीजी की भूमिका अगर गलत हो तो वैसा कहने में भी कोई हर्ज नहीं. लेकिन उस सम्बंध में गलतफहमी हो तो उसका निराकरण करना जरूरी है.

डॉ. बाबासाहेब आम्बेडकर से लेकर आज के कई जाने-माने दलित भाई-बहन गांधीजी की दो बातों का जिक्र करते हैं. एक- गांधीजी ने वर्णाश्रम धर्म का समर्थन किया था. दो- सन् 1938 का उनका अनशन तथा यरवदा पैक्ट. इन दो बातों की विस्तार से चर्चा करनी चाहिए. लेकिन इसके पहले यह भी जान लेना चाहिए कि अछूत प्रथा के बारे में गांधीजी की निजी मानसिकता तथा आचरण कैसा था.

मोहनदास के पिता करमचंद नागर बनिया जाति के थे. मां पुतलीबाई साधारण हिंदू या भारतीय स्त्रात थीं. परम्परागत दृष्टि से यह परिवार ऊंची जाति का माना जाता था. उनके घर का पाखाना साफ करने के लिए एक आदमी हर रोज आता था. काम पूरा करने पर उसे रोटी दी जाती थी. पुतलीबाई छोटे मोहन को कहती- 'जा उसे रोटी दे दे. लेकिन छूना मत.' बारह साल के मोहन ने पूछा- 'क्यों? क्यों नहीं छूना उसे?'

'अरे, वह अछूत जाति का है, उसे छूने से पाप लगता है.'

'किसने कहा पाप लगता है?'

'अपना धरम कहता है रे जा, अब ज्यादा बातें मत कर.' मां ने डांटा.

अपने ही जैसे इनसान को छूने से पाप लगता है, यह बात छोटे मोहन को जंची नहीं. कभी-कभी वह उस आदमी को छू लेता.

घर में 'मनुस्मृति' पुस्तक थी, पिता जी व बड़े भैया ने मोहन को वह पुस्तक पढ़ने को कहा, उसने पढ़ी जरूर, लेकिन उसे रास नहीं आयी. शारीरिक श्रम का काम केवल शूद्र ही करें, ऐसा क्यों? जो काम अपने नित्य व्यवहार में आवश्यक है, वह करने में कोई हर्ज नहीं. कोई काम नीच नहीं हो सकता. जो भी शरीर-श्रम का काम करना पड़े, मोहन स्वाभाविक रूप से करने लगा.

अठारह वर्ष की आयु में वह मैट्रिक परीक्षा पास हुआ, बैरिस्टर बनने इंग्लैंड गया. वह शुद्ध शाकाहारी था. पढ़ाई के लिए परदेश जाते समय मां ने कसम दिलायी थी कि मांस-मछली नहीं खाना, परस्त्रात को नहीं छूना. लंदन में मोहनदास इसका पालन करता था.

भारत से इंग्लैंड आये हुए छात्रों को अपने समाज की कुरीतियों का भान होता तथा अंग्रेज समाज में जाति-भेद या स्त्रात-पुरुष विषमता नहीं है, सबको बराबरी से समाज सम्मान देता है, यह

www.ignited.in

देखकर अच्छा लगता. ईसाई धर्म के कई प्रचारक ऐसे छात्रों को वह धर्म अपनाने का आग्रह करते. सभी मनुष्यों से प्रेम से बर्ताव करो, यह यीशू की सीख गांधीजी को भायी. लेकिन वह धर्म अपनाने के लिए अपना धर्म छोड़ना होगा, तो क्या उसमें सब खराबी-ही-खराबी है, अच्छाई कुछ नहीं है क्या? यह सवाल उनके मन में उछला. राजकोट के एक बुजुर्ग व्यापारी रायचंद भाई से गांधीजी हमेशा सलाह लेते रहते थे. हिंदू धर्म की सही पहचान हो, इसके लिए क्या पढ़ूं- यह पूछने पर रायचंद भाई ने 'गीता' का नाम सुझाया.

गांधीजी ने 'गीता' गौर से पढ़ी. उसमें अन्याय का प्रतिकार करो, मन स्थिर रखकर अपने कर्त्तव्य का पालन करो, संग्रह वृत्ति छोड़ दो- ऐसी हिदायतें दी हैं, ऐसा गांधीजी को लगा. अपनी आत्मकथा में उन्होंने लिखा है- 'ईसाई धर्म परिपूर्ण या महान है, ऐसा मानने का मेरा मन नहीं हुआ, हिंदू धर्म वैसा है, ऐसा भी मुझे नहीं लगा. हिंदू (समाज) की कई खराबियां तो स्पष्ट दिख रही थीं. अछूत प्रथा अगर हिंदू धर्म का हिस्सा है तो (ऐसा धर्म के रखवाले कहते हों तो) वह बड़ा ही सड़ा-गला हिस्सा है, या बाहर फेंकी हुई गंदगी है. हिंदू धर्म में इतने पंथभेद और इतनी जातियां क्यों हैं, उनके अस्तित्व का आधार क्या है? वेद ईश्वर की देन है, ऐसा मानने का क्या मतलब है? बाईबिल या कुरान को भी वैसा क्यों नहीं माना जाये?'

दलित वर्गों के उत्थान में महात्मा गांधी जी की भूमिका

सन् 1899 की घटना है. गांधीजी उस समय दक्षिण अफ्रीका के डरबन शहर में रहते थे. एक दक्षिण भारतीय, जो मूल रूप से अछूत परिवार में जन्मा था, लेकिन जिसने बाद में ईसाई धर्म अपनाया था, उनके सहायक के रूप में काम करने आया. गांधीजी उसे अपने साथ घर ले गये. बाथरूम में एक बर्तन रखा हुआ रहता जिसमें पाखाना करना, बाद में उसे बाहर गड्ढे में फेंककर मिट्टी से ढंकना तथा बर्तन वापस बाथरूम में रखना- ऐसा सिलसिला परिवार में चल रहा था. उस सहायक ने बर्तन में पाखाना तो किया, लेकिन उसे बाहर ले जाकर साफ़ नहीं किया. बाथरूम साफ़ करने कस्तूरबा गयीं तब उन्हें वह दिखाई दिया. बर्तन में साफ़ करूं, यह उनको जंचा नहीं, बापू ने देखा कि बा हिचकिचा रही हैं.

बापू स्वयं वह बर्तन उठाने लगे तोबा ने लपककर वह उठा लिया. बाहर ले जाकर साफ़ किया. तब से वैसे काम करने में बा कभी हिचकिचाई नहीं.

बापू ने जोहांसबर्ग के नजदीक टॉलस्टॉय फार्म बसाया. हिंदू, मुस्लिम तथा ईसाई परिवार वहां एक साथ रहते. खेती करना, फर्नीचर बनाना, चमड़े के जूते सीना आदि काम में गांधी सहित सभी निवासी हाथ बंटाते.

चमड़े का काम करना भी पुरानी हिंदू परम्परा में अछूतों का काम माना जाता था. शारीरिक श्रम का तिरस्कार तथा गंदगी से जुड़े कामों को घिनौना मानना-यह जाति-प्रथा तथा अछूत-प्रथा के मूल आधार दिखाई देते हैं. गांधीजी की अवधारणा बचपन से ही इसके विरुद्ध थी. गंदगी साफ़ करने से लेकर अन्य सेवा तथा वस्तु निर्माण के काम करना, हर स्त्रात-पुरुष का कर्तव्य है, उसकी नैतिकता संजोने में वह मददगार हैं, ऐसे विचार गांधीजी ने अपने लेखों में तथा भाषणों में प्रकट किये हैं.

1914 में दक्षिण अफ्रीका से अलविदा होकर गांधीजी भारत लौट आये. अहमदाबाद में उन्होंने साबरमती के किनारे आश्रम स्थापित किया. आश्रम के बारे में बातें हो रही थीं, तब एक सज्जन ने पूछा- 'क्या अछूत जाति के व्यक्ति को आप आश्रम में रहने की इजाजत देंगे?'

'अगर वह आश्रम के नियमों का पालन करने वाला हो तो जरूर इजाजत दी जायेगी. अछूतपन यह कोई ऐसी बात नहीं, जिसके कारण आश्रम में प्रवेश नकारा जाये.'-बापू ने कहा था.

'वैसा करोगे तो धनी लोग आपको चंदा नहीं देंगे.'

दूसरे भाई बोले.

'नहीं, तो न सही. हम किसी इनसान को अछूत नहीं मानते, सभी एक ईश्वर की ही संतान हैं.' बापू ने स्पष्ट शब्दों में कह दिया.

सात-आठ महीने बीत गये. एक दिन उनके पुराने मित्र अमृतलाल ठक्कर की चिट्ठी आयी. जिसमें लिखा था कि 'दलित जाति के एक अध्यापक आपके साथ आश्रम में रहना चाहते हैं. बड़े साफ़-सुथरे, धर्म-परायण हैं. क्या उन्हें आपके पास भेज दूं?'

गांधीजी ने हां भर दी. डोडा भाई अपनी पत्नी दानी बेन तथा लड़की लक्ष्मी के साथ आश्रम आ पहुंचे.

एक दो आश्रमवासी नाराज हुए. कानाफूसी करने लगे. बापू ने कह दिया कि वे भले ही आश्रम छोड़कर चले जाएं. अछूत प्रथा जैसा भेदभाव मन में रखने वालों ने आश्रम की सही भूमिका ठीक से समझी नहीं, ऐसा मैं मानूंगा.

आगे सेवाग्राम आश्रम में भी गांधीजी ने अपने घर में एक दलित लड़की को अपनाकर उसका पालन-पोषण किया.

www.ignited.in

आश्रमीय जीवन के लिए जो एकादश व्रत गांधीजी ने निर्धारित किये थे, उसमें स्वदेशी के साथ 'स्पर्श भावना' का समावेश किया था. हर आश्रमवासी को उन व्रतों का पालन करना आवश्यक था.

अछूत प्रथा त्याग देनी चाहिए, ऐसे विचार भारत के भक्ति मार्ग के कई संतों ने समाज को सिखाने की कोशिश की. सूरदास, महाप्रभु चैतन्य, रविदास, संत एकनाथ, नरसी मेहता, रामानंद आदि कई नाम गिनाये जा सकते हैं. गांधीजी उसी शृंखला की एक कड़ी थे.

दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटने पर महान नेता गोपाल कृष्ण गोखले ने गांधीजी को सलाह दी कि राजनीतिक काम शुरू करने के पहले एक साल पूरे भारत का भ्रमण करो. गांधीजी ने वैसा ही किया. दक्षिण भारत के एक कस्बे मायावरम् में लोगों ने उनसे भाषण देने का आग्रह किया. अपने भाषण में उन्होंने कहा- 'पंचम माने गये कई लोग मुझे मिले. उन पर ऊंची जाति के लोग जो अत्याचार करते हैं, वे सब बातें सुनकर मेरा दिल धधक उठा. इतने बड़े जनसमूह को अछूत मानने की सीख हिंदू धर्म देता होगा, ऐसा मैं नहीं मानता. अगर कोई मुझे शास्त्र निकाल-कर बता दे कि उस धर्म ने सचमुच अछूत प्रथा का आदेश दिया है तो मैं उस धर्म के खिलाफ बगावत करूंगा.'

सन् 1917 में कांग्रेस सम्मेलन में अछूत तथा निर्मूलन का प्रस्ताव कर्मठ नेता विट्ठलराम शिंदे ने लाया. इसे पारित होने में गांधीजी ने मदद की. सन् 1921 में कांग्रेस सम्मेलन में रचनात्मक कार्यक्रम का प्रस्ताव गांधीजी ने रखा. उसमें 'अछूत तथा निर्मूलन' का अंतर्भाव किया गया था.

चमड़े की चीजें बनाना, रस्सी बनाना आदि पेशे, जो अछूतों के माने गये थे, उन्हें अच्छे ढंग से चलाने का राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम गांधीजी ने चलाया. दलित बालक-बालिका को शिक्षा मिलनी चाहिए, इस दिशा में छात्रावास चलाने जैसे कई कार्यक्रम चलाये- उनकी प्रेरणा से हजारों युवकों ने स्कूल छात्रावास चलाना, खादी ग्रामोद्योग का काम करना आदि के लिए अपना जीवनदान दिया. मंदिर प्रवेश का अभियान चलाया गया. आजादी आंदोलन के कार्यक्रमों में सभी जाति-धर्म के स्त्रात-पुरुषों को सहभागी होने के लिए प्रेरित किया गया. अपनी मृत्यु के दिन 30 जनवरी 1948 को लिखे लेख में भी उन्होंने अछूत तथा निर्मूलन का कार्यक्रम कार्यकर्ता कर्मठता से चलाते रहे, ऐसा आह्वान किया.

'मैं हिंदू हूं, ऐसा कहने में मैं गर्व महसूस करता हूं.' ऐसा गांधीजी ने कहा था. वर्णाश्रम धर्म का यह एक अच्छा तरीका है, ऐसा उन्होंने 1921 में लिखे एक लेख में कहा था. फिर भी वे कहते रहे कि मैं अछूत प्रथा के खिलाफ हूं.

और एक बात ध्यान में रखनी चाहिए. गांधीजी का व्यक्तित्व गतिमान था. एक समय एक बात ठीक लगी तो उसको स्वीकार किया. अनुभव, विचारों का आदान-प्रदान, चिंतन आदि के असर से पुरानी भूमिका में सुधार करना जरूरी है, ऐसे लगा तो गांधीजी बिना हिचकिचाए वैसा करते थे. तब हरिजन साप्ताहिक के 29 अप्रैल 1933 के अंक में लिखे लेख में गांधीजी ने कहा-

'समझदार पाठक को मैं कहना चाहता हूं कि अपने विचार या भूमिका में सुसंगति दिखाई देनी ही चाहिए, ऐसी मेरी धारणा नहीं है. सत्य की खोज में मैंने कई कल्पनाएं छोड़ दी हैं तथा बहुत-सी नयी बातें अपनायी हैं. उम्र से मैं जरूर बूढ़ा हो गया हूं. लेकिन मैं नहीं मानता कि मेरा अंदरूनी विकास रुक गया है, या हाड़-मांस का विघटन होने पर रुक जायेगा. सत्य, जो मेरा ईश्वर है, की पुकार को क्षण-प्रतिक्षण प्रतिसाद देने के लिए सदा तत्पर रहना यह मेरी ख्वाइश है, अगर किसी को मेरी भूमिका में विसंगति या अंतर्विरोध लगे और अगर मेरी बुद्धि में उसका विश्वास है तो मेरे आखिरी मत को ही वह मेरा असली मत समझे यह ठीक होगा.'

गांधीजी का 'ईश्वर' किसी पारम्परिक धर्मवाला व सप्रदाय नहीं है उन सबके परे है. 'वह सृष्टि का निर्माता है' ऐसा भी गांधीजी ने कहीं नहीं कहा है. 'सत्य' या 'न्याय' यही ईश्वर है ऐसा 1932 से वे लगातार कहते रहे, एक व्यापक उदात्त, मंगलकारी कल्पना ऐसा कह सकते हैं. किसी भी धर्म या सप्रदाय का कर्मकांड उन्हें स्वीकार्य नहीं था. सोचते-सोचते तथा बोलते-बोलते उन्होंने कह डाला- जन सेवा ही ईश्वर सेवा है. विशेषतः जो अधिक पीड़ित है उसकी सेवा करना, यही ईश्वर सेवा का सर्वश्रेष्ठ तरीका है. इस विचार प्रणाली में न भेदभाव, ऊंच-नीच आदि को स्थान है, न पुरोहित वर्ग की जरूरत है. वैदिक परम्परा में ब्राह्मण को धार्मिक कार्य में जो महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है, वह गांधीजी को मंजूर नहीं था. विद्यार्जन करने वाला, शुद्ध आचरण रखने वाला कोई भी आदमी ब्राह्मण कहलाने योग्य हो सकता है तथा अन्य किसी को उससे कनिष्ठ मानने की जरूरत नहीं.

वेद तथा गीता में चार वर्णों का जिक्र है लेकिन उन ग्रंथों में कहीं भी अछूत प्रथा का उल्लेख या समर्थन नहीं है, ऐसा प्रतिपादन गांधीजी ने बड़ी गम्भीरता से किया है.

अछूत प्रथा को धर्मग्रंथों से नहीं, बल्कि रूढ़ि से बल मिला है. 'शास्त्रात् रूढ़ि बसियसी' यह एक सूत्र है. अगर कोई परिपाटी

चली आयी है तो वह प्रामाणिक मानी जाये, न उस पर उंगली उठायी जाये, न उसमें तब्दीली की जाये.

गांधीजी ने इतना सब विवेचन नहीं किया. लेकिन इतना जरूर कहते रहे कि वैदिक धर्मशास्त्रों में अछूत प्रथा कहीं लिखी नहीं है. यह बात कहकर मुझे स्वयं को हिंदू कहलवाना तथा अछूत प्रथा का विरोध करना, इसमें विसंगति या अंतर्विरोध नहीं है- ऐसा गांधीजी बताना चाहते थे. साथ-साथ मानवीय सहृदयता से जीवन-यापन करने की भावना रखने वाले सवर्ण हिंदू लोग अछूत प्रथा त्याग दें, उससे उनके धर्म पालन में कोई बाधा नहीं आने वाली है, वे ऐसा इंगित करते थे. सवर्ण जाति के स्त्रात-पुरुषों की विवेक-बुद्धि तथा मानवीयता जगाना यह तो गांधीजी का ऐतिहासिक कार्य माना जाता है. अछूत प्रथा हिंदू धर्म को लगा प्लेग का रोग है, ऐसा गांधीजी ने कहा है.

उन्होंने 1931 में एक लेख में लिखा- 'मैंने यह बार-बार कहा है कि आज जो जाति-व्यवस्था चल रही है, उस पर मेरा बिल्कुल विश्वास नहीं है. इनसान की तरक्की के रास्ते में वह रोड़े डालने वाली तथा बड़ी गंदी चीज है जो फेंक देने लायक ही है. आदमी-आदमी में ऊंच नीच व विषमता है. यह मैं कतई नहीं मानता. हम सब लोग पूरी तरह समान हैं. लेकिन समता आत्मा की है, शरीर की नहीं. वह मानसिक अवस्था है. हमें हमेशा समता का विचार करना चाहिए तथा वैसा आचरण करने का आग्रह रखना चाहिए. आज दुनिया में विषमता बहुत बढ़ गयी है. इस बाहरी विषमता के बीच रहते हुए हमें समता स्थापित करनी है. एक आदमी को दूसरे से ऊंचा कहना तो ईश्वर तथा मानवता के खिल़ाफ पाप करना है. हैसियत तथा औकात में असमानता दर्शाने वाली जाति एक दुष्ट प्रवृत्ति है.' (यंग इंडिया 4.6.1931)

तत्पश्चात गांधीजी ने वर्णाश्रम का कभी भी समर्थन नहीं किया

छह साल बाद गांधीजी तथा आम्बेडकर में इस विषय को लेकर थोड़ा विवाद हुआ. सन् 1936 में जालंधर के जात-पांत तोड़क मंडल ने एक सम्मेलन का आयोजन किया तथा डॉ. बी.आर. आम्बेडकर को अध्यक्ष बनाया. आम्बेडकर ने अपना अध्यक्षीय भाषण लिख भेजा. उसे पढ़ने के बाद स्वागत समिति ने पत्र भेजकर अनुरोध किया कि आम्बेडकर अपना एक वाक्य निकाल दें, बाबासाहेब के न कहने पर स्वागत समिति ने वह सम्मेलन न बुलाने का फैसला लिया. देश-भर में बहुत बवंडर मचा.

जात-पांत खत्म करने के लिए क्या किया जाये, यह डॉ. आम्बेडकर के भाषण का विषय था. अछूत प्रथा सहित जाति प्रथा का हिंदुओं के धर्मग्रंथ श्रुति-स्मृति यानी वेद तथा अन्य ग्रंथों में समर्थन है, ऐसा आम हिंदू मानता है. जन्म पर आधारित जाति प्रथा बुद्धि से मेल खाने वाली नहीं है. नैतिकता की भी वह विरोधी है. एक आदमी तथा दूसरे आदमी में श्रेष्ठ-कनिष्ठ भेदभाव करना सिखाना, यह अनैतिक है. अगर जाति प्रथा का सही मायने में यानी दिलोदिमाग से उन्मूलन करना हो तो उसका मूलाधार माने गये वेद आदि धर्मग्रंथों को नकारना होगा. उन पर आधारित धर्म नष्ट करना होगा. 'अगर आप यह व्यवस्था नष्ट करना चाहते हैं तो, विवेक, बुद्धि तथा नैतिकता से नाता तोड़े हुए वेद तथा शास्त्रों को ठिकाने लगाना होगा. श्रुति तथा स्मृति पर आधारित धर्म का विध्वंस आपको करना होगा. उसके बिना चलेगा नहीं. यह मेरा सोचा-समझा विचार है.'

उसी भाषण में डॉक्टर साहेब ने यह भी कहा कि हिंदुओं को दिया गया यह उनका आखिरी भाषण होगा.

सम्मेलन के संयोजकों ने बाबासाहेब को सुझाया कि वे 'वेद' शब्द उस वाक्य से हटा दें, तथा हिंदुओं के लिए यह उनका आखिरी भाषण होगा, यह भी निकाल दें, बाबासाहेब ने मंजूर नहीं किया, तो सम्मेलन मुल्तवी कर दिया गया.

'हरिजन' साप्ताहिक में गांधीजी ने 11 जुलाई, 17 जुलाई तथा 15 अगस्त 1936 को लेख में लिखा 'जात-पांत तोड़क सम्मेलन मुल्तवी करना अनुचित कदम था. डॉ. आम्बेडकर पंडित हैं, उनके विचार सुनने का मौका जनता को मिलना चाहिए था.'

गांधीजी ने आगे लिखा- 'वर्ण तथा जाति एक ही है, यह आम्बेडकर का कहना ठीक नहीं. वेदों में वर्ण का उल्लेख केवल वे कौन काम-धंधे करें, इस संदर्भ में आया है. एक वर्ण दूसरे वर्ण से श्रेष्ठ है या दूसरा कनिष्ठ है- ऐसा तो कहीं भी नहीं कहा है. जाति-प्रथा, खासकर अछूत प्रथा नष्ट होनी चाहिए, यह तो मैं भी मानता हूं. लेकिन उसके लिए वेद तथा स्मृति पर आधारित (हिंदू) धर्म को ही नष्ट करना चाहिए, इस विचार से मैं सहमत नहीं हूं. हिंदू धर्म का मूल तत्त्व यह है कि सत्य के रूप में ईश्वर एक ही है तथा मानवी परिवार को अहिंसा का कानून अपनाना चाहिए.'

डॉ. आम्बेडकर ने अपनी किताब में गांधीजी के तीन लेख छापे तथा उन्हें जवाब भी दिया. मैं कहता हूं वही धर्म या वेद का सही अर्थ है यह गांधीजी की हठवादिता बचपना जैसी है, ऐसी टिप्पणी आम्बेडकर ने की थी. जो हो, आम्बेडकर ने अपनी किताब में गांधीजी के लेखों का शीर्षक दिया- 'ए विविडिकेशन ऑफ कॉस्ट बाई महात्मा गांधी' इस कारण शायद कई दलित

www.ignited.in

नेता तथा बुद्धिजीवी मानते होंगे कि गांधीजी जाति-व्यवस्था के समर्थक थे. लेकिन गांधीजी के लेख में वैसा नहीं है.

वेद तथा स्मृति ने वर्णों में श्रेष्ठ-कनिष्ठता मानी है या नहीं, यह शब्दों का विवाद हो सकता है. हिंदू परम्परा या रूढ़ि ने श्रेष्ठ-कनिष्ठता चलायी है, यह हकीकत है. ऊंच-नीच या विषमता चलाने वाली जाति-व्यवस्था एवं अछूत प्रथा नष्ट करनी चाहिये, समता लानी चाहिए, इस पर गांधी तथा आम्बेडकर दोनों की राय स्पष्ट थी. दोनों लगातार वह कार्य हिम्मत से करते रहे. वेदों को नष्ट करना है या नहीं, इतना ही मतभेद था.

अछूत प्रथा निर्मूलन का काम प्रभावशाली ढंग से करना हो तो वेद-स्मृति पर आधारित हिंदू धर्म को ध्वस्त करना चाहिए, यह एक तरीका हो सकता है. लेकिन जनसाधारण को उदात्तता की तथा नैतिकता की साधना करने को प्रवृत्त करने के लिए धर्म का इस्तेमाल करना तर्क-संगत नहीं. हिंदू धर्म में अद्वैत विचार भी महत्त्वपूर्ण माने गये हैं. संतों ने उसी का आधार लिया है.

हिंदू धर्म को मानने वाले लोग भी अछूत प्रथा निर्मूलन में हाथ बंटाते रहे हैं. उनका तरीका कारगर नहीं रहा, यह माना जा सकता है. तो आम्बेडकर का तरीका भी बहुत फलदायी नहीं हो पाया, यह हकीकत है. हर कोई अपने विवेक बुद्धि से काम करे, एक विचार के लोग, दूसरे विचार वाले लोगों की ईमानदारी पर शक न करें, यही आंदोलन व्यापक बनाने का तरीका हो सकता है.

निष्कर्ष

अंबेडकर ने जब गोलमेज सम्मेलन में अलग निर्वाचन क्षेत्र की मांग की तो गांधी ने उसका विरोध करने में एड़ी चोटी का जोर लगा दिया. उनकी दलील थी कि इससे हिंदू समाज बिखर जाएगा. जब अंबेडकर जीत गए तो गांधी ने पूना पैक्ट पर दस्तखत के लिए उन्हें ब्लैकमेल किया और आमरण अनशन पर चले गए. इस तरह से उन्होंने दलितों की स्वतंत्र राजनीतिक अभिव्यक्ति की संभावनाओं को कुचल दिया.

गांधी के लेखन से वक्तव्यों को निकाल कर अंबेडकर ने यह दिखाया कि वे वर्ण व्यवस्था, पूंजीपतियों, मिल मालिकों और बड़े जमींदारों का समर्थन करते हैं और घोषणा कर दी कि गांधी लोकतंत्र में यकीन नहीं करते. ख्बाबा साहब अंबेडकर, व्हाट कांग्रेस एंड गांधी हैव डन टू द अनटचेबल्स, 236, सच्चाई यह है कि आज जो लोकतंत्र हमें दिखाई देता है वह उन्होंने बनाया, जो सभी अच्छी चीजों की मृग मरीचिका रचता है और पीड़ित उसके पीछे भागते रहते हैं.

सशक्तिकरण का गांधीवादी विचार हिंदू सामाजिक व्यवस्था की गुलामी का समर्थन है जिससे भाग कर दलित औपनिवेशिक सत्ता की बनाई सौहार्दपूर्ण स्थिति में जाने की कोशिश कर रहे थे. गांधी ने अपनी सारी ताकत इसे रोकने में लगाई. गांधी की प्रतिभा ने लोगों को गुमराह करने के लिए जान बूझ कर पवित्र विवेकहीनता के साथ धार्मिक नैतिक कवच तैयार किया. निश्चित रूप दलित इसके सबसे बड़े पीड़ित रहे हैं.

संदर्भ

http://www-navneethindi-com/%E0%A4%97%E0%A4%BE%E0%A4%82%E0%A4%A7%E0%A5%80&%E0%A4%94%E0%A4%B0&%E0%A4%A6%E0%A4%B2%E0%A4%BF%E0%A4%A4&%E0%A4%AA%E0%A4%A8%E0%A5%8D%E0%A4%A8%E0%A4%BE%E0%A4%B2%E0%A4%BE%E0%A4%B2/

Corresponding Author

Upendra Kumar*

M.A. in History, UGC NET